P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-V* January-2016

संस्कारः शास्त्रीय एवं समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

सारांश

संस्कार भारतीय समाज की समृद्ध सास्कृतिक धरोहर का महत्वपूर्ण पहलू है,पारम्परिक आधार है। ये आदिकाल से मानव व्यक्तित्व निर्माण सम्बन्धी भारतीय ज्ञान के परिचायक हैं। ये ऐसी विधियॉ है जिनके द्वारा मॉ के गर्भ में ही शिशु के सुसंस्कृत करने की प्रक्रिया आरम्भ कर दी जाती है। जन्मोपरान्त बच्चे के जीवन के महत्पूर्ण चरणों में विधि–विधान तथा धार्मिक अनुष्ठानों द्वारा प्रवेश करवाया जाता है। उसे मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार किया जाता है,आध्यात्मिक तौर पर सक्षम बनाया जाता है। इससे वह भावी जीवन की चुनौतियों का अधिक सृदृढ़ता से सामना कर पाता है।सस्कारो की सख्या को लेकर मनोषिया ने अपना मत व्यक्त किया है। विभिन्न सूत्रों में संस्कारों का उल्लेख मिलता है।

मुख्य शब्द : संस्कार, मनीषि, सूत्र

Please Send one passport size photo in our mail id

अनिता सरोच
ऐसोसिएट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
पालमपुर,हिमाचल प्रदेश

सुजीत सरोच
ऐसोसिएट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
बैजनाथ ,हिमाचल प्रदेश

प्रस्तावना

आदिकाल से संस्कार भारतीय समाज का महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। अनेक प्राचीन स्मृतियों, सूत्रों तथा शास्त्रों में इनका उल्लेख है। संस्कार ऐसी प्रक्रिया, पद्धति, विधि तथा व्यवस्था है जिसके द्वारा मानव शरीर, मन एवं आत्मा की शुद्धि की जाती है। संस्कार सामाजिक–धार्मिक क्रियाओं की ऐसी व्यवस्था है जिनके माध्यम से मनुष्य की शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक क्षमताओं का विकास किया जाता है। मनुस्मृति में लिखा है कि संस्कार व्यक्ति के शरीर की शुद्धि करते हैं। जैमिनी पूर्व मीमॉसा में कहा गया है, ''संस्कार वह जिसके करने से पदार्थ उपयोगी बन जाता है।''[1]

राजबली पाण्डेय ने अपनी कृति 'हिन्दू संस्कार' में लिखा है ''संस्कार शब्द अंग्रेजी के 'Sacrament' शब्द के अधिक निकट है जिसका अर्थ है धार्मिक विधि–विधान या वह अनुष्ठान, जो कि आन्तरिक एवं आत्मिक (Internal and Spiritual) सौन्दर्य का बाह्य (External) तथा दृश्य प्रतीक माना जाता है।''[2] वे कहते हैं, ''संस्कार से अभिप्राय शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं तथा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक तकि बौद्धिक परिष्कार के लिए किए जाने अनुष्ठानों से है, जिससे वह (व्यक्ति) समाज का पूर्ण विकसित सदस्य बन सके । ''उन्होंने आगे लिखा है, ''हिन्दू संस्कारों में अनेक आरम्भिक विचार, धार्मिक विधि–विधान, उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी सम्मिलित हैं जिनका उद्देश्य केवल औपचारिक दैहिक संस्कार न होकर व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार, शुद्धि एवं पूर्णता भी है।''

नागेन्द्र ने 'The Eastern Antthropologist'[3] में लिखा है '' संस्कारों की उत्पत्ति के मूल में मानवीय प्रवृत्तियों का हाथ है। यह आख्यानों के निर्माण की प्रवृत्ति का ही दूसरा रूप है

संस्कार का अर्थ है अच्छा करना, शुद्ध करना, सुन्दर करना, अवगुणों को समाप्त कर सद्गुणों को अपनाना तथा इनका विकारस करना। यह सब करने के लिए जिन क्रियाओं को किया जाता है वह संस्कार है। वास्तव में मानव–जीवन को परिष्कृत बनाने वाली वैदिक विधि, शास्त्रों में बताए विधि–विधान को ही संस्कार कहते हैं।

संस्कार आचार–विचार, प्रेरणा देने, उचित मार्गदर्शन करने, सत्कर्म तथा मर्यादाएं स्थापित करने के लिए जागरूक करने वाले सूक्ष्म सूत्र है जिनकी मन–मस्तिष्क पर अमिट छाप रहती है। संस्कारों में भूत का ज्ञान होता है, वर्तमान घटित होता है तथा भविष्य का सम्पूर्ण दृश्य निर्मित होता है। 'सूक्ष्म' तथा 'स्थूल' संस्कारों [4] में से प्रथम जीव (मानव) के सूक्ष्म शरीर में होते हैं। मानव के स्थूल शरीर स सम्बन्धित होते हैं। स्थूल संस्कारों के प्रतीक शरीर के नवद्वार होते हैं। स्थूल संस्कारों से सूक्ष्म संस्कारों का ज्ञान होता है। संस्कार मनुष्य के अन्दर की श्रद्धा, भावना, मानवीय स्वभाव तथा मानव शक्ति से सम्बन्धित हैं।

संस्कारों के तत्व [5](Elements of Sanskaras)

नवीन के निर्माण में कुछ ऐसे तत्व हैं, जो मानव को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। फलतः वे व्यक्ति का जीवन गतिशील बनाते हैं। अच्छा परिवेश, तथा अच्छा वातावरण मिले तो अच्छे संस्कारों के निर्माण की सम्भावना रहती है। बुरा परिवेश मिलने पर व्यक्ति असन्मार्ग में आरूढ़ हो जाता है। संतजनों का साथ, भगवभ्दक्ति, गंगादि पवित्र नदियों में नित्य स्नान आदि ऐसे तत्व हैं, जो व्यक्ति को उत्तम संस्कार सम्पन्न बनाकर उसके आध्यात्मिक पथ को प्रशस्त कर देते है।

मनुस्मृति के 'स्मृतिशीले च तद्विदाम्' (216) की टीका में शील के तेरह परिचायक तत्वों की चर्चा की है।

1. वेदों के जानकार ब्राम्हणों के प्रति आदर–भावना
2. देव और पितरों के प्रति भक्ति भावना
3. सौम्यता
4. दूसरों को पीड़ा न पहुॅचाना
5. दूसरों के गुणों की उत्कृष्टता के प्रति दोषारोपण न करने की भावना
6. व्यवहार में कोमलता
7. निष्ठुरता से रहित मनोभावना
8. सबके प्रति मैत्रीभाव
9. प्रियवादिता
10. कृतज्ञता
11. शरणागत की रक्षा करना,
12. दया या करूणा की भावना
13. शान्तचित्तता–ये तेरह शील के स्वरूप हैं।

संस्कारों के प्रमुख तत्व तथा उनका संक्षिप्त वर्णन निम्नोक्त हैं:[6]

सत्संग

सत्संगति बुद्धि की जड़ता को हरती है, वाणी में सत्य का संचार करती है, सम्मान में वृद्धि करती है, पापों को दूर करती है, चित्त को प्रसन्न करती है। अच्छे लोागों का साथ करने से बुद्धि निर्मल और तेज होती है, सत्य बोलने की प्रेरणा मिलती है। बुद्धि के शुद्ध होने से अच्छे कार्य हाते हैं, सत्य बोलने से वाणी का तेज बढ़ता है, मन में प्रसन्नता आती है। इसीलिए कहा गया है कि सज्जनों के साथ रहना चाहिए, सज्जनों का ही संग करना चाहिए और सज्जनों से ही विचार–विमर्श और मित्रता भी करनी चाहिए। सज्जनों का साथ, भगवान की भक्ति और गंगाजल में स्नान–ये तीन इस संसार में सार तत्व हैं, यदि अच्छे व्याक्तियों का, सत्पुरूषों का, संत–महात्माओं का साथ हो तो उसका सुफल शीघ्र ही मिलता है। कठिन समय में इनसे प्रेरणा मिलती है, अच्छी सलाह मिलती है। साथ ही इनसे किसी प्रकार का नुकसान होने की सम्भावना भी नहीं रहती, बल्कि बिगड़ते हुए कार्य को ये सुधार भी देते हैं। ये लोक भी बना देते हैं तथा परलोक भी बना देते हैं। मनुष्य काा चरित्र साथ रहने वालों से प्रभावित होता है। इस जीवन में तीन अच्छे एवं सच्चे मित्र हैं–मधुर भाषण, सज्जनों का साथ तथा अच्छे संस्कार–ये तीनों जिनके पास हैं, वे सुखी हैं। पारस पत्थर यदि लोहे को स्पर्श कर दे तो वह सोना हो जाता है, पर सज्जन पुरूष तो अपने साथ रहने वालों को अपने जैसा ही बना लेते हैं।

भगवद्भक्ति

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 12 मे श्लोक–संख्या 13 से 20 तक के श्लाको में भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने प्रिय भक्तों के लक्षण, गुण, कर्तव्य, संसार में रहने के नियम और जन्म–मरण के चक्कर से मुक्त होने की राह बतलायी है। जो पुरूष द्वेषभाव से रहित स्वार्थ रहित, सबका प्रेमी है, दयालु है तथा ममता से रहित, अहंकार से रहित, सुख–दुःखों की प्राप्ति में सम और क्षमावान् है अर्थात् अपराध करने वाले को अभय देने वाला है तथा जो योगी निरन्तर संतुष्ट है, मन–इन्द्रयों सहित शरीर को वश में किये हुए है ओर मुझमें दृढ़ निश्चय वाला है–वह मुझमें अर्पण किये हुए मन–बुद्धि वाला मेरा भक्त मुझको प्रिय है।

जो पुरूष आकांक्षा से रहित, बाहर–भीतर से शुद्ध, चतुर, पक्षपात से रहित और दुःखों से छूटा हुआ है। जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है तथा जो शुभ और अशुभ सम्पूर्ण कर्मों का त्यागी। जो शत्रु–मित्र में और मान–अपमान में सम(एक जैसा) तथा सर्दी–गर्मी और सुख–दुःखादि द्वन्दों में सम है और आसक्ति से रहित है। जो निन्दा स्तुति को समान समझने वाला मननशील और जिस किसी प्रकार से शरीर का निर्वाह होने में सदा ही सन्तुष्ट है और रहने के स्थान में ममता और आसक्ति से रहित है–वह स्थिर बुद्धि भाक्तिमान पुरूष मुझको प्रिय हैं।

गंगा आदि पवित्र नदियों मे स्नान

अच्छे संस्कारों के निर्माण, उनकी प्रतिष्ठा एवं मर्यादा की रक्षा के लिए गंगा आदि पवित्र नदियो के जल में नित्य स्नान व तर्पण दान आदि का नियम करने से व्यक्ति में सदाचार की प्रतिष्ठा हो जाती है। उसके संध्या आदि नियम भी सरलता से हो जाते हैं। कदाचित् नित्य प्रातः स्नान संध्या आदि का नियम बन जाये तो अन्य संस्कारों की मूलभित्ति तैयार हो जाती है, क्योंकि यह सबसे बड़ा संस्कार है और नवीन संस्कारों के निर्माण में इसका विशेष योगदान है।

भोजन का संस्कारों पर प्रभाव

भोजन को सामान्य खाना न मानकर उसे प्रसाद समझकर ग्रहण करना चाहिए। बहुत ही निर्मल, शुद्ध और प्रेम के वातावरण में भोजन–प्रसाद बने और पूर्ण प्रेम से ईश्वर को भोग लगार प्रसाद ग्रहण करना चाहिए। प्रसाद का वितरण कर फिर स्वयं ग्रहण करना चाहिए। भोजन बनाते समय तथा ग्रहण करते समय हम जिस विचारधारा में होते हैं, जो देखते हैं, सुनते हैं, सोचते हें यह मनन करते हैं– वैसे ही अन्न के संस्कारों में हम धीरे–धीरे प्रभावित होकर वैसे ही बन जाते हैं। संस्कारित भोजन के अभ्यास से अच्छे संस्कारों का जीवन में समावेश हो जाता है।

वाणी का नियन्त्रण

वाणी का नियन्त्रण भी एक उत्तम संस्कार है। यह उत्तम संस्कारों को जन्म देता है। इसीलिए वाक्–संयम को तप की संज्ञा दी गयी है। ऐसे ही क्षमा भी विशाल हृदय की एक वृत्ति है, यह साधुता का प्रधान लक्षण है। अतः संस्कार सम्पन्न होने के लिए इन गुणों को आत्मसात् करना चाहिए।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-V* January-2016

शास्त्रों के अनुसार संस्कार [7]

मनीषियों ने संस्कारों की संख्या,सम्बन्ध अलग–अलग विचाार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने संस्कारों का शास्त्रों में गम्भीरता से विवेचन किया है। उनमें से प्रमुख विद्वानों ने संस्कारों की जितनी संख्या बताई है उसे सारणी 1 में दर्शाया गया है।

सारणी 1 मनीषियों के अनुसार संस्कार

क्रम सं0	मनीषि	संस्कार संख्या	संस्कारों का नाम
1–	मनु	12	1. गर्भाधान (गर्भशुद्धि के लिए सम्पन्न हाने वाले कर्म)। 2. पुंसवन (गर्भाधान के चिन्ह प्रकट होने पर पुत्रोत्पत्ति के उद्देश्य से किया जाने वाला कर्म)। 3. सीमन्तोन्नयन (गर्भाधान के चौथे, छठे या आठवें महीने में होने वाला गर्भिणी के बालों का विभाजन रूप कर्म)। 4. जातकर्म (जातक का सुवर्ण–घृतप्राशन आदि कर्म)। 5. नामकर्म (नामकरण का कर्म)। 6. निष्क्रमण (शिशु को चौथे महीने सर्यदर्शन के लिये घर से बाहर निकालना 7. अन्नप्राशन (जन्म के छठे महीने पहली बार बच्चे को अन्न खिलाने का कर्म)। 8. उपनयन (यज्ञोपवीत) 9. केशान्त (यज्ञोपवीत के बाद सिर के केशों का मुण्डनकर्म)। 10. समावर्तन (वेदाध्ययन समाप्त करके ब्रम्हचारी का घर वापस आना)। 11. विवाह (स्त्री–पुरूष का परस्पर दाम्पत्य–सूत्र में बंधना)।
2.	व्यास [8]	16	1.गर्भाधान, 2. पुसवन, 3.सीमन्तोन्नयन, 4. जातकर्म, 5. नामकरण, 6. निष्क्रमण, 7. अन्नप्राशन, 8. चूडाकरण, 9. कर्णवेध, 10. उपनयन, 11. वेदारम्भ, 12, केशान्त, 13. समावर्तन, 14. विवाह, 15.विवाहाग्निपरिग्रह 16. त्रेताग्निसंग्रह।
3.	अंगिरा	24	1. गर्भाधान, 2.पुंसवन, 3. सीमन्तोन्नयन, 4. विष्णुबलि, 5. जातकर्म, 6. नामकरण, 7. निष्क्रमण, 8. अन्नप्राशन, 9.चौल, 10.उपनयन, 11–14. चार वेदव्रत, 14. समावर्तन, 16.विवाह, 17.पंच महायज्ञ, 18.आग्रयण, 19.अष्टका, 20, श्रावणी,21.आश्वयुजी, 22. मार्गशीर्षी, 23. पार्वण, 24. उत्सर्ग तथा 25.उपाकर्म।
4.	गौतम	48	1.गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3.सीमन्तान्नयन,4.जातकर्म, 5.नामकरण, 6. अन्नप्राशन, 7.चौल, 8. उपनयन, 9–12. वेदव्रत, 13. स्नान, 14. सह–धर्मिणीसंयोग, 15–19. पंच महायज्ञ(देव,पितृ, मनुष्य, भूत एवं ब्रम्ह), 20–26 सप्त पाकयज्ञसंस्था (अष्टका, पार्वण, श्राद्ध, श्रावणी, आग्रहायणी, चैत्री एवं आश्वयुजी), 27–33. सप्त हविर्यज्ञसंस्था (अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, दर्शपौर्णमास, चातुर्मास्य,आग्रहायणेष्टि, निरूढपशुबन्ध तथा सौत्रामणी) 34–40. सप्त सोमयज्ञसंस्था (अग्निष्टोम, अत्यविनष्टोम,उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र तथा आप्मतार्याम),दया क्षान्ति,अनसूया, शौच, अनायास, मंगल, अकार्पण्य तथा अस्पृहा– आठ आत्मगुण।

सारणी 1 में निर्दिष्ट सूचना स निम्नवत् तथ्य सामने आते हैं,

1. संस्कारों की संख्या को लेकर मनीषियों में भिन्न–भिन्न मत पाये जाते हैं। मनु के अनुसार कुल संस्कारों की संख्या 12 है। व्यास ने 16 संस्कारों का उल्लेख किया है जबकि गौतम ने 48 संस्कार बताए हैं।
2. सभी विद्वानों ने गर्भादान, पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन संस्कारा को क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय संस्कार माना है। इन तोनो संस्कारों को उस समय सम्पन्न कर लिया जाता है जब बच्चा अपनी मॉ के गर्भ में ही होता है।
3. शिशु के जन्म के पश्चात् जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, मुण्डन तथा उपनयन प्रमुख संस्कार हैं।
4. संस्कारों की श्रृंखला में मनु के अनुसार विवाह सबसे अन्त में आता है जबकि व्यास तथा अंगिरा का मानना है कि संस्कारों की प्रक्रिया विवाह के पश्चात् भी चली रहती है।

सारणी 2. सूत्रों में निर्दिष्ट संस्कार

क्रम सं0	सूत्र का नाम	संस्कारों की संख्या	संस्कारों के नाम
1.	आश्वलायनगृह्यसूत्र	10	1.विवाह 2.गर्भाधान, 3.पुसंवन, 4. सीमन्तोन्नयन 5.जातकर्म, 6.नामकरण,7.चूडाकरण,8.उपनयन 9. समावर्तन और 10. अन्त्येष्टि।
2.	पारस्कर गृह्यसूत्र	13	1.विवाह,2.गर्भाधान,3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5.जातकर्म,6.नामकरण,7. निष्क्रमण, 8.अन्नप्राशन, 9.चूडाकरण,10.उपनयन,11.कशान्त,12. समावर्तन 13.अन्त्येष्टि।
3.	बौधायनगृह्यसूत्र	13	1.विवाह,2.गर्भाधान,3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5.जातकर्म,6.नामकरण,7.उपनिष्क्रमण,8.अन्नप्राशन, 9.चूडाकरण, 10.कर्णवेध,11.उपनयन, 12.समावर्तन पितृमेध।
4.	वाराहगृह्यसूत्र		1. जातकर्म, 2. नामकरण, 3.दन्तोद्गमन, 4.अन्नप्राशन,5.चूडाकरण,6. उपनयन, 7. वेदब्रत, 8. गोदान, 9.समावर्तन, 10.विवाह, 11. गर्भाधान, 12. पुंसवन और 13.सीमन्तोन्नयन।
5.	वैखानसगृह्यसूत्र	18	1. ऋतु संगमन, 2. गर्भाधान, 3. सीमन्तोन्नयन, 4. विष्णुबलि 5.जातकर्म, 6.उत्थान, 7. नामकरण, 8. अन्नप्राशन, 9. प्रवासागमन, 10. पिण्डवर्धन, 11.चौलक,12.उपनयन,13पारायण,14.व्रतबन्धविसर्ग, 15. उपाकर्म, 16.उत्सर्जन, 17. समावर्तन 18. पाणिग्रहण।

सारणी 2 में विभिन्न सूत्रों तथा उनमें बताए गये संस्कारों को दर्शाया गया है जिससे निम्नवत् तथ्य सामने आते है।

1. विवाह अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण संस्कार है।
2. विवाहोपरान्त गर्भादान, पुंसवन तथा सीमन्तान्नयन तीन ऐसे संसकार हैंजिन्हें उसे समय किया जाता है जब बच्चा मॉ के गर्भ में ही होता है।
3. जातकर्म तथा नामकरण जन्मोपरान्त क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय संस्कार होते हैं।
4. अनेक सूत्रों में अन्त्येष्टि को जीवन यात्रा का अन्तिम संस्कार बताया गया है।

प्रमुख संस्कार(Main Sanskaras)

हिन्दू धर्मशास्त्रों के अनुसार जीवनपर्यन्त मनुष्य अने संस्कारों की प्रक्रियो सें गुजरता है। गर्भाधान से अंन्त्येष्टि तक अनेक संस्कारात्मक क्रियाओं का करना भारतीय समाज में संस्कारों के प्रति आस्था, विश्वास, उपयोगिता एवं महत्व को दर्शाता है। संस्कारों की संख्या काफी अधिक है मगर वर्तमान समय में प्रचलित संस्कारों में से गर्भाधान, जातकर्म, नामकरण, उपनयन, विवाह तथा अंत्येष्टि (दाह) संस्कार प्रमुंख है। महत्वपूर्ण संस्कारों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित हैं–

गर्भाधान (Gharbhadhana)

गर्भाधान संस्कार मानव जीवन का प्रथम संस्कार है। विवाह के समय स्त्री–पुरूष देवी–देवताओं की स्तुति करके प्रार्थना करते हैं कि उन्हें योग्य व शक्तिशाली सन्तान प्राप्त हो। यह संस्कार नए प्राणी के गर्भ के रूप में आने के लिए किया जाता है।

पुंसवन

पुत्र की प्राप्ति के लिए शास्त्रों में पुंसवन संस्कार का विधान है। जब गर्भ दो–तीन मास का होता है तथा गर्भिणी में गर्भ के चिन्ह स्पष्ट हो जाते हैं तभी पुंसवन–संस्कार का विधान बताया गया है। शुभ मंगलमय मुहूर्त में मांगलिक पाठ करके गणेश आदिदेवताओं का पूजन कर वटवृक्ष के नवीन अंकुरों तथा पल्लवों और कुश की जड़ को जल के साथपीस कर उस रसरूप औषधि को पति गर्भिणी की दाहिनी नाक से पिलाता है। इन मन्त्रों में सुसंस्कृत तथा अभिमन्त्रित भाव–प्रधान नारी के मन में पुत्रभाव का प्रवाह प्रवाहित हो जाता है। जिसके प्रभाव से गर्भ के मांस–पिण्ड में पुरूष के चिन्ह उत्पन्न हो जाते हैं।

सीमन्तान्नयन

गर्भ के छठे या आठवें मास में यह संस्कार किया जाता है। इस संस्कार का फल भी गर्भ की शुद्धि ही है। सामान्यतः गर्भ में 4 मास के बाद बालक के अंग–प्रत्यंग–हृदय आदि प्रकट हो जाते हैं। चेतना का स्थान हृदय बन जाने के कारण गर्भ में चेतना आ जाती है। इसलिए इसमें इच्छाओं का उदय होने लगता है। ये इच्छाएं माता के हृदय में प्रतिबिम्बित होकर प्रकट होती हैं गर्भ में जब मन तथा बुद्धि में नूतन चेतना शक्ति का उदय होने लगता है तब इनमें जो संस्कार डाले जाते हैं उनका बालक पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस समय गर्भ शिक्षण योग्य होता है । प्रहलाद को देवर्षि नारद जी का उपदेश तथा अभिमन्यु को चक्रव्यूह–प्रवेश का उपदेश इसी समय में मिला था। अतः माता–पिता को चाहिए कि इन दिनों विशेष सावधानी के साथ शास्त्र में बतलायी विधि के अनुसार व्यवहार कर।

जातकर्म

बालक का जन्म होते ही जातकर्म संस्कार करने का प्रावधान है। नालछेदन से पूर्व बालक को स्वर्ण की शलाका से अथवा अनामिका अॅगुली से असमान मात्रा में मधु तथा घृत चटाया जाता है। घृत आयुवर्धक तथा वात

पितनाशक है तथा मधु कफनाशक है। इन तीनों का सम्मिश्रण आयु, लावण्य तथा मेघा शक्ति को बढ़ाने वाला तथा पवित्र–कारक होता है। बालक के पिता तथा आचार्य को बालक के कान के पास उसको दीर्घायु के लिए मन्त्र का पाठ किया जाता है। इस संस्कार में मॉ का दूध पिलाने का विधान इसलिए किया गया है क्योंकि मॉ का दूध ही सर्वाधिक पोषक पदार्थ है।

नामकरण

इस संस्कार का फल आयु, तेज की बुद्धि एवं लौकिक व्यवहार की सिद्धि बताया गया है।जन्म से दस रात्रि के बाद ग्यारहवें दिन या कुल–क्रमानुसार सौवें दिन या एक वर्ष बीत जाने के बाद नामकरण संस्कार करने की विधि है। पुरूष और स्त्रियों का नाम किस प्रकार स रखा जाये, इन सारी विधियों का वर्णन पुराणों में बताया गया है।

निष्कमण[9]

इस संसार का फल विद्वानों ने आयु की वृद्धि बताया है। यह संस्कार बालक के चाथे या छठे मास में होता है, सूर्य तथा चन्द्रादि देवताओं का पूजन कर बालक को उनके दर्शन कराना इस संस्कार की मुख्य प्रक्रिया है। बालक का शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश से बनता है। बालक का पिता इस संस्कार के अन्तर्गत आकाश आदि पंचभूतों के अधिष्ठाता देवताओं से बालक के कल्याण की कामना करता है।

अन्नप्राशन [10]

इस संस्कार के द्वारा माता के गर्भ में जो दोष बालक में आ जाते हैं उनका नाश हो जाता है। जब बालक 6–7 मास का हो जाता है ओर दांत निकलने लगते हैं पाचन शक्ति प्रबल होने लगती है तब यह संस्कार किया जाता है। शुभ मुहूर्त के देवताओं का पूजन करने के पश्चात् माता–पिता आदि सोने या चॉदी की शलाका या चम्मच से मन्त्र के साथ बालक को खीर आदि पवित्र और पुष्टि कारक अन्न चटाते हैं। इस संस्कार के अन्तर्गत देवों को खाद्य पदार्थ निवेदित कर अन्न खिलाने का विधान बताया गया है। अन्न ही मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है उसे भगवान का कृपा प्रसाद समझकर ग्रहण करना चाहिए।

वपनक्रिय (चूड़ाकरण) [11]

इसका फल बल, आयु तथा तेज की वृद्धि करना है। इस प्रायः तीसरे, पांचवें या सातवें वर्ष अथवा कुल परम्परा के अनुसार करने का विधान है। मस्तक के भीतर ऊपर को जहां बालों का भंवर होता है वहां सम्पूर्ण नाड़ियों एवं संधियों का मेल होता है।उसे 'अधिपीत' नामक मर्मस्थान कहा गया है। इस मर्मस्थान की सुरक्षा के लिए ऋषियों ने इस स्थान पर चोटी रखने का विधान किया है।

कर्णभेदन[12]

पर्ण पुरूषत्व एवं स्त्रीत्व की प्राप्ति के लिए यह संस्कार किया जाता है। शास्त्रों में कर्णभेद रहित पुरूष को श्राद्ध का अधिकरी नहीं माना गया है। इस संस्कार को छः मास से लेकर 16वें मास तक अथवा तीन, पॉच आदि विषम वर्ष में या कुल आचार को मानते हुए सम्पन्न करना चाहिए। सूर्य कि किरणें कानों के छिद्र से प्रविष्ट होकर बालक–बालिका को पवित्र करती है। यद्यपि ब्राह्मण तथा वेश्य का रजतश्लाका (सूई) से क्षत्रिय का स्वर्णशलाका से तथा शूद्र का लौहशलाका द्वारा कान छेदन का विधान है तथा वैभवशाली पुरूषों को स्वर्णशलाका से ही यह क्रिया सम्पन्न करानी चाहिए।

उपनयन (व्रतादेश)

इस संस्कार से द्विजत्व की प्राप्ति होती ह। शास्त्रों तथा पुराणों में तो यहां तक कहा गया है कि इस संस्कार के द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य का दूसरा जन्म होता है। विधिवत यज्ञोपवीत धारण करना इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है। इस संस्कार के द्वारा अपने कल्याण के लिए वेदाध्ययन करना तथा गायत्री जप आदि कर्म करने का अधिकार प्राप्त होता है। वेदाध्ययन के साथ–साथ गुरू बालक को कई उद्देश्य जैसे वैदिक और लौकिक शास्त्राों का ज्ञान कराने वाले वेदव्रत और विद्याव्रत इन दो व्रतों को बालक के हृदय में स्थापित करना तथा बुद्धि विद्या के स्वामी वृहस्पति बालक के गुरू की विद्याओं से संयुक्त करे। प्राचीन काल में केवल वाणी से ही ये शिक्षायें नहीं दी जाती थीं, परन्तु गुरूजन तत्परतापूर्वक शिष्यों से पालन भी करवाते थें।

वेदारम्भ[13]

उपनयन संस्कार के बाद बालक का वेदाध्ययन में भी अधिकार प्राप्त हो जाता है। वेदविद्या के अध्ययन से सारे पापों का नाश होता है–आयु की वृद्धि होती है तथा सारी सिद्धियॉ प्राप्त होती है। गणेश तथा सरस्वती जी की पूजा करने के पश्चात् वेदारम्भ–विद्यारम्भ में प्रवृष्टि होने का विधान है। अपने गुरूजनों से वेदों तथा उपनिषदों का अध्ययन करना चाहिए।

(साम.642)

केशान्त गोदान[14]

वेदारम्भ संस्कार में ब्रम्हचारी गुरूकुल में वेदों का स्वाध्याय तथा अध्ययन करता है। उस समय वह ब्रम्हचर्य का पूर्ण पालन करता है। उसके केश और दाढ़ी धारण करने का विधान है। जब विद्याध्ययन पूर्ण हो जाता है तब गुरूकुल में ही केशान्त संस्कार सम्पन्न होता है। इस संस्कार में भी आरम्भ में सभी संस्कारों की भांति गणेशादि देवों का पूजन कर तथा यक्षादि के सभी कार्यों का सम्पादर करना पड़ता है। उसके बाद दाढ़ी बनाने की (मश्रु–बुपन) क्रिया सम्पन्न की जाती है। इसलिए यह श्मश्रु संस्कार भी कहलाता है। श्मश्रु संस्कार ही केशान्त संस्कार है। इसे गोदान–संस्कार भी कहा जाता है, क्योंकि गौं यह नाम केश (बालों) का भी है और केशों का अन्तभाग अर्थात् समीपस्थित श्मश्रु भाग ही कहलाता है ।

समावर्तन (वेदस्नान)[15]

समावर्तन विद्याध्ययन का अन्तिम संस्कार है। विद्या अध्ययन पूर्ण हो जाने के अन्तत अनन्तर स्नातक ब्रम्हचारी अपने पूज्य गुरू की आज्ञा पाकर अपने घर को लोटता है। इसलिए इसे समावर्तन–संस्कार कहा जाता है। गृहस्थ–जीवन में प्रवेश पाने का अधिकारी हो जाता समावर्तन–संस्कार का फल है। वेद–मन्त्रों से अभिमन्त्रित जल से भरे हुए 8 कलशों से विशेष विधिपूर्वक ब्रम्हचारी का स्नान कराया जाता है, इसलिए यह वेद स्नान संस्कार भी कहलाता है।

विवाह

पुराणों के अनुसार ब्रम्ह आदि उत्तम विवाहों से उत्पन्न पुत्र–पितरों को तारने वाला होता है। विवाह संस्कार का भारतीय संस्कृति में अत्यधिक महत्व है। कन्या व वर दोनों की स्वेच्छाचारी होकर (अपनी इच्छा के अनुसार) विवाह करने की आज्ञा शास्त्रों में प्रदान नहीं की गई है। इसके लिए कुछ नियम और विधान बने हैं। जिससे उनकी स्वेच्छाचारिता पर नियन्त्रण होता है। पाणिग्रहण–संस्कार देवता और अग्नि को साक्षी मानकर करने का विधान है। भारतीय संस्कृति में यह दाम्पत्य–सम्बन्ध जन्म–जन्मान्तर, युग–युगान्तर तक माना गया है।

विवाहाग्निपरिग्रह

विवाह–संस्कार में लाजा–होम आदि क्रियाएं जिस अग्नि में सम्पन्न की जाती हैं वह 'आवसध्य' नामक अग्नि कहलाती है। इसी को विवाहाग्नि भी कहा जाता है। शास्त्रों में निर्देश है कि किसी बहुत पशुवाले वैश्य के घर से अग्नि को लाकर विवाह स्थल की पवित्र भूमि पर मन्त्रों से स्थापना करनी चाहिए तथा उसी स्थापित अग्नि में विवाह–सम्बन्धी लाजा–होम तथा औपासम होम करना चाहिए। विवाह के अन्त में जब वर–वधू अपने घर आने लगते हैं, तब उस स्थापित अग्नि को घर लाकर किसी पवित्र स्थान में प्रतिस्ठित कर उसमें सुबह–शाम कुल परम्परा के अनुसार प्रतिदिन हवन करना चाहिए।

त्रेताग्निसंग्रह [16]

विवाहाग्नि परिग्रह–संस्कार में यह स्पष्ट किया गया है कि विवाह में घर से लायी गयी आवसध्य अग्नि प्रतिष्ठित की जाती है और उसी में स्मार्त कर्म आदि अनुष्ठान किये जाते हैं। उस स्थापित अग्नि से अतिरिक्त तीन अग्नियों (दक्षिणाग्नि,गार्हपत्य तथा आहवनीय) की स्थापना तथा उनकी रक्षा आदि का विधान भी शास्त्रों में निर्दिष्ट है। ये तीन अग्नियां जेताग्नि कहलाती है जिसमें श्रौतकर्म होते हैं।

संस्कारों का भारतीय जनमानस पर गहरा प्रभाव रहा है। कोटि–कोटि भारतीयों ने संस्कारों के माध्यम से अपने शरीर, आत्मा तथा बुद्धि का शुद्धिकरण किया है। स्वयं को परिष्कृत किया है। अपने भीतर के खोटों को दर का खुद को कुन्दन बनाया है। आधुनिक शिक्षा के चलते शिक्षित वर्ग में संस्कृति की इस अदभुत् धरोहर की जानकारी में कुछ कमी दृष्टिगोचर होती है। इसलिए समय की यह मॉग है कि संस्कार विधियों को पुनर्स्थापित किया जाए। इनके मूल भाव एवं तत्व को समझा जाए तथा इनकी प्रक्रिया का सुदृढ़िकरण किया जाए।

सन्दर्भ

1. Quoted from the History of Dharamshastra.Vol. 2,P-190
2. डॉ0 राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृष्ठ–17
3. Dr Nagendra. S. P. The Eastern Anthropologist, Jan-April, 1962
4. Surroch Sujit and Surroch Anita (2015),society in india,modern publishers Jalandhar P.P.30-36.
5. कल्याण, संस्कार अंक (2006) गीता गोरखपुर प्रैस प्र0 369–71
6. Surroch and Surroch op.cit. PP. 31-32.
7. Ibid.
8. व्यासस्मृति 1 113–14 गर्भाधनं पुंसवन सीमन्तों जातकर्म च। नामक्रियानिष्क्रमणे त्राशनं वपनक्रियाः।।
9. अर्थववद(8/2/24)
10. अर्थववद(8/2/28)
11. यजुर्वेद (3/63)
12. यजुर्वेद (28/21)
13. सामवेद (642)
14. कल्याण,संस्कार अंक (2006),संस्कारदीप भाग 2,पृष्ठ 342
15. ऋग्वेद(2 / 25 / 22)